|| श्रीहरिः ||
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

|| गीता पढ़ें, पढ़ायें, जीवन में लायें ||

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 9: राजविद्याराजगुह्ययोग

1/3 (श्लोक 1-6), रविवार, 08 दिसंबर 2024

विवेचक: G T VRAT JANHAVI JI DEKHANE

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/BJv-uykoUEQ

गोपनीय ज्ञान और उसका विज्ञान

सुमधुर प्रार्थना, हनुमान चालीसा पाठ, दीप प्रज्वलन, गीता गीत तथा मधुर मन्त्रोच्चार के साथ ही समस्त गुरुओं को और भारत माता को नमन करके आज का सत्र आरम्भ हुआ। सभी बच्चे बहुत अच्छे लग रहे हैं। आज कुछ बच्चे तो तिलक लगाकर भी आए हैं। सत्र को रोचक बनाने के लिए बच्चों सेआज के अध्याय का नाम पूछा गया।

शिव तेज भैया ने सबसे पहले हाथ उठाकर उत्तर दिया-
राजविद्याराजगुह्ययोग।

यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण अध्याय है।
वैसे तो श्रीमद्भगवद्गीता के सारे अध्याय ही महत्त्वपूर्ण हैं।

इससे पहले हमने बारहवाँ अध्याय पढ़ा है इसका नाम बताइए। गौरव भैया ने बताया कि बारहवें अध्याय का नाम भक्तियोग है।

उसके बाद पन्द्रहवाँ अध्याय भी पढ़ा है। बच्चों से कहा गया कि कोई भी पन्द्रहवें अध्याय का नाम बताए।
पार्थ ने सही उत्तर दिया कि पन्द्रहवें अध्याय का नाम पुरुषोत्तमयोग है।

उसके बाद सोलहवें अध्याय का नाम पूछा गया, जिसका उत्तर देते हुए उत्सव भैया ने बताया कि सोलहवें अध्याय का नाम दैवासुरसम्पद्विभागयोग है।

सत्रहवें अध्याय का नाम पूछा गया।
जिसका उत्तर केशव भैया ने दिया कि सत्रहवें अध्याय का नाम श्रद्धात्रयविभागयोग है।

नवांँ अध्याय बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। बच्चों से पूछा गया कि-

श्रीमद्भगवद्गीता कौन से बड़े ग्रन्थ का भाग है? कौन से ग्रन्थ में श्रीमद्भगवद्गीताजी आती हैं?

सभी बच्चों ने सही उत्तर दिया- महाभारत। श्रीमद्भगवद्गीता महाभारत का भाग है और यह महाभारत ग्रन्थ के मध्य में आती हैं।

हम सभी जानते हैं कि श्रीमद्भगवद्गीता में कुल अठारह अध्याय हैं और यह अध्याय गीता जी में मध्य का अध्याय है।
हम समझ सकते हैं कि महाभारत नाम के महाग्रन्थ के मध्य में श्रीमद्भगवद्गीता जी आती हैं और श्रीमद्भगवद्गीता के मध्य का यह अध्याय है तो यह इतना महत्त्वपूर्ण होना ही है।

महाभारत में जो ज्ञान हमें वेदव्यास जी ने दिया है, यदि उसका निचोड़ निकालना चाहें तो वह ज्ञान हमें श्रीमद्भगवद्गीता के सात सौ श्लोकों में मिल जाता है। गीता जी के इन सात सौ श्लोकों में जो ज्ञान मिलता है, वह सारा का सारा ज्ञान हमें नवें अध्याय में मिल जाता है। हम जानते हैं कि यह ज्ञान श्रीकृष्ण भगवान ने अर्जुन को दिया था।

सारी विद्याओं में जो श्रेष्ठतम विद्या है, वह श्रीभगवान इस नवें अध्याय में हमें दे रहे हैं। हमें इसका विवेचन बहुत ध्यान से सुनना है और अपने ध्यान को भटकने नहीं देना है। इस अध्याय के नाम से ही पता चलता है कि यह सब विद्याओं में सर्वश्रेष्ठ है। राजविद्या का यही अर्थ है।

राजगुह्य का अर्थ है-वह विद्या जो बिल्कुल छिपी हुई है, जो एक गोपनीय रहस्य है। यह ऐसा श्रेष्ठ रहस्य है जिसे जानने के बाद कुछ भी जानना शेष नहीं रह जाता है। कुछ भी और जानने की आवश्यकता नहीं रहती।

एक कथा आती है कि एक छोटा सा बालक था जिसका नाम श्वेतकेतु था। उस समय बालकों को शिक्षा ग्रहण करने के लिए गुरुकुल में भेजा जाता था। श्वेतकेतु नाम के उस बालक को भी अपनी पढ़ाई पूरी करने के लिए गुरुकुल भेजा गया।

गुरुकुल का अर्थ होता है कि जब तक पढ़ाई पूरी नहीं होती, गुरु के घर पर ही रहना पड़ता है और शिक्षा ग्रहण करनी होती है। आजकल जो हम स्कूल जाते हैं और फिर वापस घर आकर अपनी मम्मी के साथ में रहते हैं। वह सुविधा गुरुकुल में नहीं होती थी। हम आराम से घर में रहते हैं। अपनी मनपसन्द का भोजन करते हैं। जब मन करता है खेलते हैं, जब मन करता है टीवी देखते हैं। ऐसी सब आराम की बातें गुरुकुल में नहीं होती थीं। एकदम नियम के अनुसार वहाँ पर रहना पड़ता था और गुरु की सेवा करनी होती थी। वहाँ जो भी काम होते थे वे करने पड़ते थे। सुबह जल्दी उठकर सब कार्य भी करने होते थे और अपनी पढ़ाई भी करनी होती थी। इससे उन बच्चों को सम्पूर्ण ज्ञान आ जाता था।

प्राचीन काल में सब लोग इसी गुरुकुल पद्धति के अनुसार ही पढ़ते थे। श्वेतकेतु भी ऐसे ही गुरुकुल में चले गए। वे प्रारम्भ से ही बहुत कुशाग्र थे। जल्दी ही कुछ वर्षों में उन्होंने अपना अध्ययन पूरा कर लिया और वे घर आ गए। घर आने के बाद उन्हें अभिमान हो गया कि मुझे सब आता है, क्योंकि उन्होंने अपनी सभी परीक्षाएँ बहुत अच्छे अङ्कों से उत्तीर्ण की थी।

उन्होंने अपने पिताजी से कहा "पिताजी मैंने सब शास्त्र पढ़ लिए हैं। मुझे सब ज्ञान हो गया है। अब आप मुझसे कोई भी प्रश्न पूछिये। मुझे सब आता है मैं उसका उत्तर दे दूँगा"। श्वेत केतु के पिताजी भी बहुत कुशाग्र थे। उन्होंने प्रश्न किया कि वह कौन सी विद्या है जिसे जानने के बाद और कुछ भी जानने की आवश्यकता नहीं रहती?

श्वेतकेतु को इसका उत्तर नहीं आया, क्योंकि उन्होंने ऐसा कुछ पढ़ा नहीं था। उन्होंने उत्तर दिया कि हमारे गुरु जी ने तो ऐसी कोई बात नहीं बताई, इसलिए मुझे आपके इस प्रश्न का उत्तर नहीं आता। यदि गुरुजी बताते तो मैं आपको उत्तर दे सकता था। फिर उन्होंने अपने पिताजी से ही पूछा कि आप ही बताइए कि ऐसा कौन सा ज्ञान है?

उनके पिताजी ने उन्हें बताया कि जो परमात्म विद्या, ब्रह्मविद्या है उसे जानने के बाद जीवन में कुछ भी जानना शेष नहीं रह जाता।

उसी परमात्म विद्या के विषय में उपनिषदों में बहुत चिन्तन आया है। यह परमात्मा को जानने की विद्या है। इसका चिन्तन बहुत गहन होगा। इसीलिए इसे गुह्य भी कहा गया है। इसे रहस्यमय कहा गया है क्योंकि यह विद्या सब की समझ में नहीं आती।

हम जैसे लोग जिन पर परमात्मा की विशेष कृपा होती है, उन्हें आगे जाकर थोड़ा-थोड़ा इसका ज्ञान हो जाता है।
यह गुह्यतम ज्ञान है। इसे जानने के बाद और कुछ जानना शेष नहीं रहता।

बच्चों से पूछा गया कि क्या वह जानते हैं कि-
ज्ञानेश्वर महाराज ने कौन से ग्रन्थ की रचना की थी?
सौरभ भैया ने सही उत्तर दिया- ज्ञानेश्वरी।
ज्ञानेश्वर महाराज ने ज्ञानेश्वरी नामक ग्रन्थ की रचना की है।

इस ग्रन्थ का मूल नाम भावार्थ दीपिका है। यह ग्रन्थ ज्ञानेश्वर मौली जी ने हम लोगों को सरल भाषा में श्रीमद्भगवद्गीता समझाने के लिए लिखा था।

यह ग्रन्थ मराठी में है और हिन्दी में भी गीता प्रेस में उपलब्ध है। इस ग्रन्थ में ज्ञानेश्वर महाराज ने बताया है कि यह अध्याय उनका भी सबसे प्रिय अध्याय है। जो भी इस अध्याय को ध्यान से सुनेगा और समझने का प्रयास करेगा, उसे अपना जीवन आनन्दमय कैसे करना है, यह रहस्य पता चल जाएगा।

इस अध्याय को पढ़ने से जीवन सौ प्रतिशत आनन्दमय होकर ही रहेगा।
आप अपना पूरा ध्यान अब इस अध्याय पर लगा दीजिए। अब हम सभी इस अध्याय को समझने का प्रयास करते हैं।
इस नवें अध्याय के पहले श्लोक में श्रीभगवान कहते हैं-

9.1

श्रीभगवानुवाच
इदं(न्) तु ते गुह्यतमं(म्), प्रवक्ष्याम्यनसूयवे।
ज्ञानं(वँ) विज्ञानसहितं(यँ), यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात्॥9.1॥

श्रीभगवान् बोले -- यह अत्यन्त गोपनीय विज्ञान सहित ज्ञान दोष दृष्टि रहित तेरे लिये तो (मैं फिर) अच्छी तरह से कहूँगा, जिसको जानकर (तू) अशुभ से अर्थात् जन्म-मरण रूप संसार से मुक्त हो जायगा।

विवेचन- श्रीभगवान कहते हैं कि यह ज्ञान मैंने पहले भी बताया है और अब मैं तुम्हें इसे पुनः बता रहा हूँ।

श्रीभगवान ने यह ज्ञान दूसरे, चौथे और सातवें अध्याय में भी बताया है। अभी इस ज्ञान को और अच्छे से समझाने के लिए श्रीभगवान कहते हैं कि यह गोपनीय ज्ञान है और यह मैं तुम्हें पुनः बता रहा हूँ।

श्रीभगवान इस ज्ञान को बार-बार इसलिए बता रहे हैं, क्योंकि उन्हें पता है कि आगे जाकर हमारे जैसे बच्चे आएँगे और श्रीमद्भगवद्गीता को पढ़ेंगे। उन्हें यह ज्ञान अच्छे से प्राप्त हो जाए, इसीलिए इसकी बार-बार आवृत्ति की गई है।

श्रीभगवान अर्जुन को कहते हैं कि वह रहस्यमय ज्ञान है और तुम मेरे दोष रहित भक्त हो इसलिए मैं इसे तुम्हें पुनः भली भाँति समझाऊँगा।

जब हम कक्षा में पढ़ते हैं तो हमारे बहुत सारे दोस्त होते हैं। हमें वह सभी प्रिय होते हैं। परन्तु उनमें से भी कुछ पाँच-छ: का हमारा एक अलग से ग्रुप होता है। उनसे हम सबसे ज्यादा बातें करते हैं। उन्हीं के साथ अपना खाना खाते हैं। शेष मित्रों से वह हमें कुछ ज्यादा प्रिय होते हैं। ऐसे मित्रों को हम प्रियतर कहते हैं। उनमें भी हमारा एक सबसे अच्छा और प्रिय मित्र होता है, जिसे हम प्रियतम कहते हैं।

यहाँ श्रीभगवान कह रहे हैं कि मेरे सभी अध्याय बहुत महत्त्वपूर्ण हैं, परन्तु उन सब में यह नवाँ अध्याय अत्याधिक महत्त्वपूर्ण,

गोपनीय है और मेरा प्रियतम अध्याय है।**वक्ष्याम्यनसूयव**
यहाँ पर श्रीभगवान अर्जुन को अनसूयव कहकर सम्बोधित करते हैं। हमने पिछले अध्यायों में भी देखा है कि भगवान अर्जुन को विभिन्न नामों से पुकारते हैं। हमारी माता जी भी हमें घर में प्यार से विभिन्न नामों से पुकारती हैं। इसी तरह यहाँ पर श्रीभगवान अर्जुन को अनसूयव कहते हैं।

अनसूयव का क्या अर्थ है?
अनसूयव का अर्थ है कि तुम किसी में कोई दोष देखते ही नहीं हो। तुम किसी के अवगुण नहीं देखते, गुण ही गुण देखते हो। यदि किसी ने कोई गलती भी की है तो भी उनके अच्छे गुण ही अर्जुन देखेंगे।

हमने देखा है कि युद्ध के समय जब अर्जुन युद्ध के लिए जा रहे थे। जहाँ से श्रीमद्भगवद्गीता को भगवान ने कहना शुरू किया है। वहाँ भी अर्जुन इसीलिए युद्ध करने से रुक गए, क्योंकि शत्रु पक्ष में खड़े हुए सभी लोग उनके अपने सगे सम्बन्धी थे। अर्जुन को उन सबके गुण ही दिखाई दे रहे थे। ऐसा नहीं था कि अर्जुन डर गए थे। अर्जुन अपने स्वभाव के कारण अपने शत्रुओं के भी गुण देख रहे थे। वह उनमें अपने सम्बन्ध ढूँढने लगे थे।

हमें ज्ञात है कि कौरवों ने पाण्डवों को जीवन में बहुत कष्ट दिए थे। इतने सारे कष्ट उठाने के बाद भी अर्जुन बोलते हैं-

तस्मान्नार्हा वयं हन्तुं धार्तराष्ट्रान्स्वबान्धवान्।
स्वजनं हि कथं हत्वा, सुखिनः स्याम माधव॥

"यह सब तो मेरे स्वजन हैं। मैं इनको कैसे मार सकता हूँ?
इतने कष्ट उठाने के बाद भी अर्जुन के मन में उनके लिए कोई द्वेष नहीं है। उनके लिए अर्जुन के हृदय में अभी भी प्रेम है। अर्जुन उन्हें अभी भी अपना बन्धु और मित्र ही समझ रहे हैं। इसलिए श्रीभगवान उन्हें अनसूय बोलते हैं कि तुम अनसूय हो। तुम सब में अच्छे गुण ही देखते हो।

यहाँ भगवान हमें कह रहे हैं कि अगर हमें इस गोपनीय और महत्त्वपूर्ण ज्ञान को समझना है तो हमें भी अर्जुन की तरह बनना होगा। तभी इस ज्ञान को हम अपने जीवन में ला सकते हैं। इसके लिए हमें क्या करना है? हमने सोलहवें अध्याय में सभी दैवीय गुण पढ़े हैं।

हमें प्रतिदिन उन्हें देखना है कि इसमें से कौन से गुण हमारे जीवन में आ गए हैं?

हमें प्रतिदिन देखना चाहिए कि उन दैवीय गुणों में से कौन से गुण हम हमारे जीवन में पालन कर रहे हैं। हमें प्रतिदिन उनका अभ्यास करना है, ताकि हमारा मन भी अर्जुन की तरह हो जाए। धीरे-धीरे यह ज्ञान हमें भी समझ में आ जाए।

श्रीभगवान कह रहे हैं कि यह ज्ञान मैं तुम्हें विज्ञान के साथ समझाऊँगा।विज्ञान का अर्थ होता है विशेष ज्ञान। यहाँ पर भगवान कह रहे हैं कि मैं तुम्हें ज्ञान तो दूँगा ही साथ ही ज्ञान का अनुभव भी करवाऊँगा।

मान लीजिए कि आप सब ने कभी भी रसगुल्ला खाया नहीं है। अब मैं आपसे बताऊँ कि रसगुल्ला एक गोल-गोल मिठाई होती है। रस से भरी हुई होती है। सफेद रङ्ग की होती है और स्पञ्जी होती है। उसे दबाते हैं तो उसमें से शक्कर का रस निकलता है। वह बहुत मीठी होती है। इस प्रकार रसगुल्ले के विषय में आपको कितनी भी देर तक बताया जाए, परन्तु यदि आपने उसे खाया नहीं है तो आप समझ नहीं पाएंगे।

आपको यदि रसगुल्ला दिखा भी दिया जाए और खाने के लिए नहीं दिया जाए तो भी आप नहीं समझ पाएंगे कि यह क्या है? उसको खाने का अनुभव किए बिना आपको उसका आनन्द नहीं आएगा। जब आपको रसगुल्ला खाने के लिए दिया जाएगा, तभी आपको पता चलेगा कि यह कितना मीठा और रस भरा होता है। बिना खाए आपको उसका आनन्द और अनुभव नहीं आएगा। यह होता है ज्ञान का अनुभव।

जब कोई वस्तु दिखाई जाती है तो उसे ज्ञान कहते हैं ।
जब आप उसका अनुभव स्वयं लेते हैं तब वह विज्ञान कहलाता है।

अभी जब आप अपनी माताजी से पूछते हैं कि भोजन में क्या बनाया है? वे कहती हैं कि दाल-भात और भिण्डी की सब्जी बनाई है। यह आपके ज्ञान हो गया। जब तक आप थाली में लेकर उसको ग्रहण नहीं करेंगे, खाएंगे नहीं, तब तक आप नहीं कह सकते कि आपको इस सब भोजन का अनुभव हो गया। तो यह अनुभव होना ही विज्ञान है।

भगवान यहाँ पर अर्जुन से कह रहे हैं कि मैं इसका तुम्हें ज्ञान तो दूँगा ही साथ-साथ इसका विज्ञान भी अनुभव कराऊँगा। ऐसा ज्ञान, विज्ञान सहित प्राप्त करने के बाद तुम्हें मोक्ष की प्राप्ति हो जाएगी।

अगले श्लोक में भगवान अर्जुन को इस ज्ञान की महत्ता बताते हैं कि यह ज्ञान कैसा है? इस ज्ञान के भगवान ने आठ विशेषण बताए हैं। जो हम अगले श्लोक में देखेंगे।

9.2

राजविद्या राजगुह्यं(म्), पवित्रमिदमुत्तमम्।
प्रत्यक्षावगमं(न्) धर्म्यं(म्), सुसुखं(ङ्) कर्तुमव्ययम्।।9.2।।

यह (विज्ञान सहित ज्ञान अर्थात् समग्र रूप) सम्पूर्ण विद्याओं का राजा (और) सम्पूर्ण गोपनीयों का राजा है। यह अति पवित्र (तथा) अतिश्रेष्ठ है (और) इसका फल भी प्रत्यक्ष है। यह धर्ममय है, अविनाशी है (और) करने में बहुत सुगम है अर्थात् इसको प्राप्त करना बहुत सुगम है।

विवेचन- हम प्रतिदिन कक्षा में ज्ञान प्राप्त करते ही हैं। कभी हम विज्ञान पढ़ते हैं कभी केमिस्ट्री, बायोलॉजी। कभी गाना भी सीखते हैं। इस तरह से विभिन्न ज्ञान हम प्राप्त करते हैं। यहाँ पर श्रीभगवान कह रहे हैं कि यह ज्ञान जो मैं अब अर्जुन को देने वाला हूँ वह सबसे गोपनीय है और सब विद्याओं का राजा है अर्थात् सर्वश्रेष्ठ ज्ञान है।

जो भी गोपनीय बात होती है, वह हम अपने सबसे प्रिय व्यक्ति को ही बताते हैं। सबको वह बात नहीं बताते। इसी प्रकार श्रीभगवान अर्जुन से कह रहे हैं कि यह जो सबसे गोपनीय और सर्वश्रेष्ठ ज्ञान है यह मैं तुम्हें ही दे रहा हूँ। क्योंकि तुम मुझे अत्यन्त प्रिय हो।

यह हर एक के समझ में नहीं आता। जो भगवान में श्रद्धा रखते हैं, उन्हें ही यह ज्ञान समझ आता है।

संस्कृत में राज का अर्थ चमक भी होता है। यह ज्ञान ऐसा है, जो हमें श्रीभगवान के पास लेकर जाता है। यह ज्ञान सबसे पवित्र और उत्तम है। यह हमें पवित्र कर देता है।

क्या कोई बता सकता है कि अभी तक हमारे कितने जन्म हो गए हैं?
बच्चों ने उत्तर दिया- अनगिनत। किसी-किसी बच्चे ने दो, नौ, सौ आदि भी बताया।

श्रीभगवान हमें चौथे अध्याय में कहते हैं-

श्रीभगवानुवाच
बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन।
तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परन्तप॥4.5॥

श्रीभगवान कहते हैं आपके अनगिनत जन्म हो गए हैं और मुझे उन सब के बारे में पता है परन्तु आप वह सब नहीं जानते।

हमारे अनगिनत जन्म हुए हैं, जिनमें हमने किसी जन्म में अच्छे कार्य किए हैं और किस जन्म में बुरे कार्य किए हैं। इस जन्म में हमने श्रीमद्भगवद्गीता पढ़ ली तो यह एक अच्छा कर्म हो गया। यदि हम किसी की सेवा करते हैं या किसी की सहायता करते हैं तो वह भी एक अच्छा कर्म है।

कभी-कभी हम किसी मच्छर को मार देते हैं या झूठ भी बोल देते हैं तो यह बुरे कर्मों में आता है। हमारे सभी अच्छे- बुरे कर्मों का श्रीभगवान को पता रहता है। हमारे अनगिनत जन्म हुए हैं और इसीलिए हम इसे जीवन का चक्र कहते हैं। हम इसी में फँसे रहते हैं। अलग-अलग जन्मों में कर्म करते रहते हैं और उन्हीं का फल हमें मिलता रहता है।

श्रीभगवान कहते हैं कि यह ज्ञान अत्यन्त पवित्र है। यह हमें इस जन्म-मरण के चक्र से मुक्त कर देता है। अच्छे बुरे कर्मों का सब लेखा-जोखा साफ हो जाता है और हम भगवान के पास चले जाते हैं। हमारा मन पवित्र हो जाता है। यह ज्ञान हमें तुरन्त ही फल देने वाला है। यह ज्ञान केवल ऋषि मुनियों के लिए नहीं है। हम सभी इस ज्ञान को प्राप्त कर सकते हैं। इसके लिए हमें स्वाध्याय करना है, गीता पठन करना है और भक्ति करनी है।

अभी हम सब विद्यार्थी हैं। हमें अपना विद्यार्थी धर्म निभाना चाहिए। हम किसी के पुत्र और किसी की पुत्री हैं तो अपने माता-पिता के प्रति जो हमारा धर्म है उसका भी हमें पालन करना है।

जब हम धीरे-धीरे ऐसे करते जाएँगे तो हम इस ब्रह्म ज्ञान को प्राप्त कर सकते हैं। हम इसे प्राप्त करने के योग्य हो जाएँगे। तब हमें इसका ज्ञान सौ प्रतिशत होगा। यह ज्ञान हमें धर्मयुक्त बनाता है अर्थात् हमें अपने सारे नियम और कर्मों का पालन करना चाहिए। अपने धर्म का पालन करेंगे तो यह ज्ञान हमें प्राप्त होगा। यह ज्ञान बहुत सरल है इसे हम सरलता से प्राप्त कर सकते हैं।

श्रीभगवान कहते हैं कि चाहे कोई भी जीव है उसके हृदय में मैं ही हूँ। हमें हमारे अन्दर बसे हुए भगवान नहीं दिखते हैं, क्योंकि हमें लगता है कि हम अलग हैं। हम मनुष्य हैं, हम अलग हैं और हम भगवान को मन्दिर आदि में ढूँढ़ने जाते हैं।

आप ऐसे समझें कि यह एक दर्पण है, जिस पर बहुत ज्यादा धूल जमी हुई है। धूल होने के कारण हमें अपना प्रतिबिम्ब स्पष्ट नहीं दिखता है। यदि हमने वह धूल पोंछ दी तो हमें दर्पण में अपना प्रतिबिम्ब ठीक से दिखने लगेगा। वैसे ही हमारे मन पर अज्ञान की जो धूल जमी हुई है, उसे हमें साफ करना होगा। तब हमारे मन में जो भगवान का रूप है, वह हमें दिखने लगेगा। इसलिए हमें अपना मन साफ करना है और जो आसुरी सम्पदाएँ हमारे मन में भरी हुई है उन्हें झटक कर हटाना है।

हमने सोलहवें अध्याय में छः आसुरी सम्पदा देखी थीं-

दम्भो दर्पोऽभिमानश्च क्रोधः पारुष्यमेव च।
अज्ञानं चाभिजातस्य पार्थ सम्पदमासुरीम्॥16.4॥

यह जो छः आसुरी सम्पदाएँ हैं, इनसे हमें अपना पीछा छुड़ाना होगा। हम अपने हृदय में बसे परमात्मा के निकट जा सकते हैं। यह बहुत सरल है। हमें सात्त्विक काम करने हैं। सात्त्विक श्रद्धा रखनी है। तब एकदम सरलता से हम इस ज्ञान को प्राप्त कर पाएंगे।

आप सब ने सुना होगा
Easy come and Easy Go

यदि कोई बुरे मार्ग से अत्यधिक धन कमा लेता है तो हमारे माता-पिता हमें कहते हैं कि ऐसा नहीं करना चाहिए। ऐसा कमाया हुआ धन जल्दी ही नष्ट हो जाता है।

यह ज्ञान हमें सुगमता से तो प्राप्त हो जाता है। हमारे पास से कभी जाता नहीं है। यह ज्ञान अव्यय और अविनाशी है। एक बार

यदि इस ज्ञान को हमने प्राप्त कर लिया तो फिर यह सदा हमारे साथ ही रहता है। यह कभी भी नष्ट होने वाला नहीं है।

अभी हम गीता जी के श्लोक सीख रहे हैं। यदि दो-चार दिन हमने इनका अभ्यास नहीं किया तो फिर हम भूलने लगते हैं। इसी प्रकार यदि हम साइकिल चलाना सीखते हैं और फिर प्रैक्टिस छूट जाए तो हमें साइकिल चलाने में दिक्कत होती है। यह सारी विद्याएँ हम बहुत जल्दी भूलने लगते हैं।

श्रीभगवान कहते हैं कि इस अध्याय का ज्ञान हमेशा आपके साथ रहता है। आप यह कभी नहीं भूलते हैं। यह ज्ञान यदि हमने एक बार प्राप्त कर लिया तो फिर वह हमेशा हमेशा याद रहता है कभी नहीं भूलता।
अगले श्लोक में भगवान कहते हैं-

9.3

अश्रद्दधानाः(फ्) पुरुषा, धर्मस्यास्य परन्तप।
अप्राप्य मां(न्) निवर्तन्ते, मृत्युसंसारवर्त्मनि।।9.3।।

हे परंतप! इस धर्म की महिमा पर श्रद्धा न रखने वाले मनुष्य मुझे प्राप्त न होकर मृत्युरूप संसार के मार्ग में लौटते रहते हैं अर्थात् बार-बार जन्मते-मरते रहते हैं।

विवेचन- बहुत से लोग श्रद्धा न रखते हुए, केवल दिखावे के लिए जोर-जोर से श्रीमद्भगवद्गीता का पाठ करते हैं। वे लोग भगवान को कभी भी प्राप्त नहीं कर सकते। वह मृत्यु रूपी संसार चक्र में घूमते रहते हैं।

मृत्युसंसारवर्त्मनि। यह हमने पहले भी पढ़ा है।

बच्चों से पूछा गया कि क्या कोई बता सकता है कि यह हमने कौन से अध्याय में और कौन से श्लोक में पढ़ा है? बारहवें अध्याय के सातवें श्लोक में भी भगवान ने कहा है-

तेषामहं समुद्धर्ता, मृत्युसंसारसागरात्।
भवामि नचिरात्पार्थ मय्यावेशितचेतसाम्॥12.7॥

जो इस ज्ञान में विश्वास नहीं रखता है, वह इस मानस मृत्यु संसार रूपी सागर में ही चक्कर काटता रहता है। इस संसार को मृत्युलोक कहा जाता है।

जो भी जन्म लेता है उसकी मृत्यु निश्चित है।

चाहे वह कोई चूहा है या मनुष्य है। कितना ही बलशाली क्यों न हो मृत्यु तो उसकी भी आनी ही है। जो इस चक्र में फँसे हुए हैं, वह फँसे ही रहते हैं। इस अध्याय का ज्ञान प्राप्त करने के बाद व्यक्ति को जन्म और मृत्यु के चक्र से मुक्ति मिल जाती है। हमें इस मनुष्य जन्म को सार्थक करने का प्रयास करना है।

पूरी दुनिया में अलग-अलग तरह के जीव रहते हैं। कहीं कोई कॉकरोच है, कोई कुत्ता है, कोई बिल्ली है। इसी प्रकार वनस्पति भी अनेक प्रकार की होती है। इन सारे जीवों में मनुष्य जन्म ही सर्वश्रेष्ठ है।

मनुष्य के रूप में ही हमारे पास गलत और सही को समझने की बुद्धि है। इसीलिए इसे सर्वश्रेष्ठ कहा जाता है। इस जन्म में यदि हम अच्छे कर्म करेंगे तो अगले जन्म में हमें कष्ट नहीं उठाना पड़ेगा। भगवान के सङ्कीर्तन और श्रीमद्भगवद्गीताजी के श्लोकों के पाठ से हम अपना जन्म सुधार सकते हैं।

भगवान कहते हैं कि यदि श्रद्धा के साथ हम इस ज्ञान की उपासना करते रहेंगे तो हम इस ज्ञान में प्रवीण हो जाएँगे।

9.4, 9.5

मया ततमिदं(म्) सर्वं(ञ्), जगदव्यक्तमूर्तिना।
मत्स्थानि सर्वभूतानि, न चाहं(न्) तेष्ववस्थितः।।9.4।।

न च मत्स्थानि भूतानि, पश्य मे योगमैश्वरम्।
भूतभृन्न च भूतस्थो, ममात्मा भूतभावनः।।9.5।।

यह सब संसार मेरे निराकार स्वरूप से व्याप्त है। सम्पूर्ण प्राणी मुझ में स्थित हैं; परन्तु मैं उनमें स्थित नहीं हूँ तथा (वे) प्राणी (भी) मुझ में स्थित नहीं हैं - मेरे इस ईश्वर-सम्बन्धी योग (सामर्थ्य) को देख ! सम्पूर्ण प्राणियों को उत्पन्न करने वाला और प्राणियों का धारण, भरण-पोषण करने वाला मेरा स्वरूप उन प्राणियों में स्थित नहीं है। (9.4-9.5)

विवेचन- श्रीभगवान यहाँ पर जो कह रहे हैं, उसे हम बर्फ के उदाहरण से समझ लेते हैं। बर्फ तो सभी ने देखी है। बर्फ पानी से बनती है।

बर्फ में पानी है पर क्या?
या पानी में बर्फ है?

जो हम लोग प्रतिदिन पानी देखते हैं, क्या उसमें बर्फ है? नहीं उस पानी में बर्फ नहीं है। जैसे बर्फ हो जाने पर भी उसमें पानी है, पर हमें दिखता नहीं है। पानी में बर्फ नहीं है, यह भी हम जानते हैं। उसी प्रकार समुद्र है, समुद्र में लहरें उठती हैं। समुद्र की वजह से वह लहरें हैं और उन लहरों में समुद्र का पानी है। क्या लहरों में पूरा का पूरा समुद्र है? लहरों में समुद्र का पानी है, पर क्या लहरें ही समुद्र हैं? क्या हम लहरों को हाथ में उठा सकते हैं?

जिस समय उस लहर को हम उठा लेते हैं तो सिर्फ पानी ही पानी हमारे हाथ में आता है। इसी प्रकार से श्रीभगवान पहले दो बातें बता रहे हैं कि मैं पहले दुनिया में हूँ। मैं पूरी दुनिया में हूँ और सारा जगत मेरे में है। वह भगवान हमें समझाने के लिए कह रहे हैं। हम भगवान को और अपने को अलग-अलग देखते हैं। हम भगवान में हैं और भगवान हम में हैं।

अब भगवान कहते हैं कि मैं दुनिया में हूँ और दुनिया मुझ में नहीं है। वह बता रहे हैं कि वह हमें किस दृष्टि से देख रहे हैं? वह बता रहे हैं कि उनसे अलग कुछ है ही नहीं।

यह चूहा, बिल्ली, मनुष्य कुछ अलग-अलग नहीं है। सब मैं ही हूँ। जिस प्रकार समुद्र में लहरें आती हैं और वह समुद्र का पानी ही रहता है। मैंने आपको पानी से भरा हुआ गिलास दिखाया और कहा कि इसमें पानी भरा हुआ है। उस पानी के मध्य में भी कुछ पानी है तो क्या इस बात का कोई अर्थ है?

अगर मैं कहूँ कि पानी में ही पानी है तो इसका कोई अर्थ नहीं है।
हम सब भगवान का ही रूप हैं। सब जगह पर वही व्याप्त हैं।

श्रीभगवान कहते हैं कि वह सब मुझमें है, यह कहना गलत है। परन्तु मैं सब में हूँ।

हमें अपने स्वयं और श्रीभगवान में अन्तर दिखाई देता है, क्योंकि हमारे मन पर अज्ञान की धूल जमी हुई है। जिस समय वह धूल हट जाएगी, हमें भी श्रीभगवान का वह रूप दिखाई देने लगेगा। उसके लिए हमें साधना करनी है और श्रीमद्भगवद्गीता जी के अध्याय पढ़ने हैं। ताकि श्रीभगवान का यह जो कथन है कि हर जगह भगवान ही हैं, वह हमें समझ में आ जाए।

श्रीभगवान अर्जुन से कहते हैं कि तुमने मेरा ऐश्वर्यशाली रूप नहीं देखा है। यदि तुम इसे देख लोगे तो फिर तुम्हारी समस्याओं का अन्त हो जाएगा। यह देखने के लिए हमें थोड़ी मेहनत करनी पड़ती है, साधना करनी पड़ती है। जब हमारा मन शुद्ध हो जाएगा हम भगवान का यह कथन समझ पाएँगे।

अगले श्लोक में श्रीभगवान इसी बात को और समझा कर कहते हैं।

9.6

यथाकाशस्थितो नित्यं(वँ), वायुः(स्) सर्वत्रगो महान्।
तथा सर्वाणि भूतानि, मत्स्थानीत्युपधारय॥9.6॥

जैसे सब जगह विचरने वाली महान् वायु नित्य ही आकाश में स्थित रहती है, ऐसे ही सम्पूर्ण प्राणी मुझमें ही स्थित रहते हैं - ऐसा तुम मान लो।

विवेचन- श्रीभगवान कह रहे हैं कि सबके भीतर मैं ही हूँ। हम सब ने भक्त प्रहलाद की कथा पढ़ी है। उनके पिताजी हिरण्यकश्यप एक क्रूर राक्षस थे। भक्त प्रहलाद एक राक्षस के पुत्र होने के बाद भी नारायण के परम भक्त थे। एक बार अत्यन्त क्रुद्ध होकर उनके पिताजी ने उनसे पूछा कि क्या इस स्तम्भ में भी तुम्हारे भगवान हैं?

भक्त प्रहलाद ने बोल दिया कि हाँ हैं, इस स्तम्भ में भी मेरे नारायण स्थापित हैं। हमें सोचना चाहिए कि यदि एक स्तम्भ में श्रीभगवान हो सकते हैं तो हमारे और आप सबके अन्दर भी श्रीभगवान ही हैं। भक्त प्रहलाद को यह बात पक्के तौर पर पता थी कि सब जगह पर भगवान हैं। उनकी भक्ति इतनी विशाल थी कि उनको यह बात समझ आ गई थी कि भगवान हर स्थान पर हैं। वह सब जगह भगवान को देख पा रहे थे।
जैसे ही हिरण्यकश्यप ने उस स्तम्भ को लात मारी, वह स्तम्भ टूट गया। उसमें से भगवान प्रकट हो गए। यह जो भगवान कहते हैं कि मैं कण-कण में हूँ। भगवान हर कण में निराकार रूप में, निर्गुण रूप में स्थित हैं। जब हिरण्यकश्यप ने वह स्तम्भ तोड़ दिया तो भगवान नृसिंह का रूप लेकर प्रकट हुए।

सभी सजीव और निर्जीव सृष्टि में भगवान का वास है। हमें अपनी साधना बढ़ानी है और अपने मन को इतना शुद्ध करना है कि हम उन्हें सब जगह पर देख सकें।

श्रीभगवान बता रहे हैं कि जैसे वायु आकाश में रहती है। हमारे आस-पास का सारा वातावरण आकाश है। हम दिन में देखें या रात में। हमें आकाश सब ओर दिखाई देता है। इसी प्रकार हमारे शरीर में भी कहीं-कहीं पर वायु पॉकेट (Air pocket) बनी रहती हैं, हमारी हड्डियों के बीच में भी एअर पॉकेट हैं। आँखों के पीछे भी थोड़ी खाली जगह है तो उसे भी आकाशी कहते हैं।
जो भी खाली जगह है उसे आकाश कहते हैं।

पृथ्वी के आस-पास जो आकाश है, उसमें वायु भरी हुई है। जिसके द्वारा हम साँस ले पा रहे हैं। उसमें ऑक्सीजन, हाइड्रोजन और नाइट्रोजन है। अलग-अलग प्रकार की वायु है। जिस प्रकार आकाश में वायु स्थित है, उसी प्रकार यह सारे भूत मात्र भी भगवान में स्थित हैं। जिस प्रकार आकाश में वायु रहती है, उसी प्रकार हम सब भगवान में रहते हैं।

पृथ्वी के बाहर भी आकाश है, जिसे हम अन्तरिक्ष (Space) कहते हैं। जहाँ पर ऑक्सीजन नहीं है। तो क्या हमें यह समझना चाहिए कि आकाश मात्र पृथ्वी के पास स्थित है, नहीं ऐसा नहीं है। आकाश पृथ्वी के बाहर भी व्याप्त है।

यहाँ श्रीभगवान हमें यही बता रहे हैं कि मेरा अस्तित्व इस छोटे आकाश से भी अधिक विस्तृत है। आकाश का अन्त अभी हमारे वैज्ञानिकों को भी पता नहीं चला है। जिस प्रकार इस सम्पूर्ण वातावरण में वायु मुझ में (आकाश) में रहता है उसी प्रकार एक छोटे रूप में आप सब मुझ में रहते हो।

हमने देखा है कि लहरें समुद्र में किनारे-किनारे पर ही रहती हैं। अन्दर का सारा समुद्र शान्त होता है। लहरें उठें या न उठें। समुद्र में कोई अन्तर नहीं होता। लहरों का पूरा का पूरा अस्तित्व समुद्र पर निर्भर करता है, पर समुद्र का अस्तित्व लहरों पर निर्भर नहीं करता।

यदि हम बाल्टी में समुद्र का पानी भर लें तो उसमें लहरें नहीं आएँगी। इस प्रकार भगवान कहते हैं कि यह जो सारे भूत मात्र हैं यह मेरे कारण हैं। वह जो भी कार्य करते हैं, चलते हैं, उसमें मैं लिप्त नहीं रहता हूँ। इन सब भूत-प्रेत की उत्पत्ति और इनकी लय कैसे चल रही है? इनका प्रबन्धन कैसे होता है? यह हमें भगवान अगले श्लोक में बताएँगे।
इसी के साथ आज का विवेचन सत्र समाप्त हुआ।

प्रश्नोत्तर सत्र-

प्रश्नकर्ता- उत्सव भैया
प्रश्न- हिंसा करने वाले लोगों में भी भगवान होते हैं तो वो क्यों हिंसा करते हैं?
उत्तर- हिंसा करने वाले लोगों में भी भगवान होते हैं किन्तु वो लोग भगवान के दिए हुए उपदेशों को नहीं मानते हैं, उनका अनुसरण नहीं करते हैं।

प्रश्नकर्ता- प्रियांशी दीदी
प्रश्न- श्रीभगवान ने गीता जी के उपदेश अर्जुन को ही क्यों दिए?
उत्तर- श्रीभगवान ने गीता जी के उपदेश अर्जुन को ही इसलिए दिए क्योंकि उन्हें अर्जुन प्रिय थे।
अर्जुन परन्तप, अनसूय, जन्म से ही दैवीय सम्पदाओं से युक्त थे और अर्जुन भगवान के परम भक्त भी थे।

वह कहानी तो आपने सुनी होगी जिसमें महाभारत के युद्ध से पूर्व अर्जुन और दुर्योधन श्री कृष्ण से मिलने जाते हैं। तब श्रीकृष्ण उनसे कहते हैं कि आपके पास दो विकल्प हैं-
एक विकल्प है कि आप मेरी नारायणी सेवा ले लें।
दूसरा विकल्प है कि मैं निहत्था आपके साथ आपकी ओर रहूँगा।
यह सुनकर अर्जुन ने तुरन्त कह दिया था- निःसन्देह आप मेरे साथ रहेंगे। मुझे नारायणी सेवा नहीं चाहिए। इस प्रकार अर्जुन श्रीकृष्ण के परम भक्त थे।

प्रश्नकर्ता- देवांश भैया
प्रश्न- अश्वत्थामा की मृत्यु क्यों नहीं हुई?
उत्तर- अश्वत्थामा को भगवान ने श्राप दिया था इसलिए उनकी मृत्यु नहीं हुई। अश्वत्थामा ने अभिमन्यु की पत्नी उत्तरा के गर्भस्थ शिशु के वध हेतु ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया था। इस पाप कर्म से क्रोधित हो कर श्रीकृष्ण ने अश्वत्थामा को कभी नहीं मरने का श्राप दिया और उसके मस्तक से मणि भी निकाल दी ताकि वह सदैव पीड़ा में ही रहे।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!

हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !

संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!

Let's come together with the motto of Geeta Pariwar, and gift our Geeta Classes to all our Family, friends & acquaintances

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||

||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||